दैनिक भास्कर

Date: 11-08-26

'मुस्लिम नाटों का गठन हमारे लिए चिंताजनक है

संपादकीय

पाकिस्तान, तुर्किये और सऊदी अरब के बीच सुरक्षा समझौता भारत के लिए कई कारणों से चिंता का सबब है करार का मुख्य बिंदु है- एक देश पर हमला तीनों देशों पर आक्रमण माना जाएगा। इन तीन देशों में से दो घोषित रूप से इस्लामिक राज्य हैं, जबकि एक फिलहाल अधिनायकवादी शासक के हाथों में है। पाकिस्तान परमाणु-शक्ति वाला देश है, जबकि सऊदी अरब तेल के कारण आर्थिक ताकत रखता है। और तुर्किये नाटो का सदस्य है। ऑपरेशन सिंदूर के समय पाकिस्तान को तुर्किये की ड्रोन सप्लाई से भारत के लिए असहज स्थिति पैदा हुई थी। सऊदी अरब आर्थिक रूप से कमजोर पाकिस्तान को समय-समय पर मदद देता है। इनमें से केवल सऊदी अरब से भारत के संबंध अच्छे हैं, लेकिन इस नए समीकरण को हर पहलू को देखना होगा। चूंकि तीनों देशों में भौगोलिक नजदीकी भी है, इसलिए इसका सामरिक महत्व भी बढ़ जाता है। हमारे रूस और इजराइल से भरोसेमंद संबंध हैं, लेकिन रूस और चीन का परस्पर नाता और चीन का पाकिस्तान पर वरदहस्त भारत को वह भरोसा नहीं देता, जो तुर्किये और सऊदी पाकिस्तान को देते हैं। फिलहाल तो मानव विकास और एआई में आगे होना ही हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए, लेकिन सामरिक रूप से सक्षम न होना शत्रुओं या पैर रखने वाले मुल्कों को हमें युद्ध में उलझाने का दुस्साहस दे सकता है।

दैनिक जागरण

Date: 11-08-26

सुधार की मांग करता लोकतंत्र

डॉ. एके वर्मा, (लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

बिहार, मध्य प्रदेश और गुजरात में एक-एक विधानसभा सीटों के उपचुनावों में तीन राजनीतिक दलों को सफलता प्राप्त हुई। बिहार की बांकीपुर में जन सुराज पार्टी की जीत से इस दल की बोहनी हुई तो मध्य प्रदेश की दतिया को कांग्रेस और गुजरात की मांजलपुर को भाजपा ने अपने पास बरकरार रखा। यह भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता का प्रतीक है और चुनावों की शुचिता का संकेत भी। चुनाव ही सरकार चुनने का लोकतांत्रिक तरीका है। लोकतंत्र तो एक व्यवस्था है, जिसमें नीतियों और कानूनों का निर्माण, विकास परियोजनाएं, लोक कल्याण के प्रतिमान, वित्तीय संसाधन जुटाने और उनके समुचित प्रयोग तथा सुरक्षा और प्रतिरक्षा व्यवस्थाओं को बनाने में जनप्रतिनिधियों के माध्यम से जन भावनाओं के अनुरूप निर्णय लिए जाने चाहिए। जनता को अपने जनप्रतिनिधियों से बहुत अपेक्षाएं होती हैं, चाहे वे सत्तापक्ष के हों या विपक्ष के। हालांकि विगत 75-76 वर्षों में राजनीतिक संस्कृति में लगातार गिरावट आई है और जनप्रतिनिधियों ने जनता को निराश किया है।

लोकतांत्रिक सरकारें जनता के प्रति उत्तरदायी होती हैं, भले ही जनता को आगामी चुनावों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। वैसे भी लोकतंत्र में सरकारें जनप्रतिनिधियों के माध्यम से जनता के प्रति दैनिक आधार पर उत्तरदायी होती हैं, क्योंकि उन्हें सरकार से प्रश्न पूछने, जनहित के मुद्दे उठाने, सरकार के विरुद्ध निंदा और अविश्वास प्रस्ताव लाने का अधिकार है। वे सदन में ऐसा कर सकें, इसके लिए संविधान का अनुच्छेद 105 सांसदों और अनुच्छेद 194 विधायकों को सदन में अभिव्यक्ति और मतदान की पूर्ण स्वतंत्रता देता है।

हाल के दौर में लोकतंत्र के मोर्चे पर दो विसंगतियां दिखाई पड़ती हैं। एक, सरकार और विपक्ष में सतत, गंभीर, बौद्धिक और शालीन संवाद का अभाव हो चला है, जिससे संसदीय बहसें और कार्यवाहियां बाधित हो रही है। दूसरा, सत्ता पक्ष के प्रस्तावों पर विपक्ष गंभीर आलोचना करने के बजाय कटाक्ष, उपहास, आरोप, शोर, बहिष्कार आदि का सहारा ले रहा है। इससे संसद परिसर में ही धरना-प्रदर्शन की प्रवृत्ति विकसित हो रही है। वह गंभीरता से कोई वैकल्पिक या रचनात्मक सुझाव देने की स्थिति में नहीं। परिणामस्वरूप, संसदीय बहसों में लोगों की रुचि घटती जा रही है।

एक समय विपक्ष के नेता संख्या में कम होने के बावजूद अपने ज्ञान, बौद्धिकता और प्रभावी अभिव्यक्तियों से सत्ता पक्ष और देश का ध्यान और सम्मान अर्जित करते थे। वह परंपरा अब विलुप्तप्राय है। दलों ने अच्छे और योग्य लोगों को पीछे धकेल, अपराधियों और धनवानों को जिताऊ प्रत्याशी के रूप में आगे कर दिया। निर्वाचन आयोग केवल मतदान प्रतिशत बढ़ाने पर ध्यान देता है और यह प्रयास नहीं करता कि राजनीतिक दल अच्छे और योग्य लोगों को राजनीति में लाएं। बहुत कम विधायक और सांसद बहस के लिए अच्छी तैयारी करके आते हैं। परिणामस्वरूप, महत्वपूर्ण विधेयक शोर-शराबे के बीच बिना गंभीर वाद-विवाद के ऐसे ही पारित जाते हैं।

देश में भाजपा और वामदलों के अलावा अधिकांश दल परिवार केंद्रित राजनीति पर आधारित हैं। कुछ अपवादों को छोड़ अधिकतर दल आंतरिक-लोकतंत्र के अभाव से ग्रस्त हैं। परिणामस्वरूप दलों के अंदर नीतिगत मुद्दों पर सार्थक और प्रभावी रणनीति नहीं बन पाती, जिससे उनके सांसद/विधायक किसी मुद्दे पर तथ्यात्मक और तार्किक विचार नहीं रख पाते। इससे सरकार को बेहतर सुझाव नहीं मिलते।

जनता ने कांग्रेस और भाजपा दोनों सरकारों को परखा है। प्रत्येक सरकार ने कुछ अच्छा काम किया है। उनमें कुछ खामियां भी रही हैं, लेकिन विपक्ष का दायित्व न केवल उन खामियों को रेखांकित करना है, वरन बेहतर विकल्प सुझाना भी है। तभी आगामी चुनावों में जनता विपक्ष को सत्ता सौंपने का मन बनाए। मोदी सरकार में कई बड़े और महत्वपूर्ण काम हुए, विकास हुआ, सुरक्षा-प्रतिरक्षा सुदृढ़ हुई तथा बिगड़ते वैश्विक-परिदृश्य में देश के हितों को सुरक्षित करने की कवायद हुई। यह भी लोकतंत्र की ही कसौटी है कि कोई सरकार कितना भी अच्छा काम करे, उसे आलोचना भी सहनी पड़ेगी और साथ ही साथ जन समर्थन प्राप्त करने के प्रयास भी जारी रखने होंगे।

विपक्ष को समझना होगा कि जनता की रुचि इसमें नहीं है कि आप मोदी सरकार को हटाएं, उसकी रुचि इसमें अधिक होगी कि आप उससे बेहतर क्या करेंगे? ऐसा नहीं कि जनता किसी भी सरकार से शत-प्रतिशत संतुष्ट होती है, लेकिन जब उसे मतदान करना होता है तो वह सरकार और विपक्ष दोनों को तौलती है। आज विपक्ष 'मोदी-हटाओ' एजेंडा में इतना लिप्त है कि जनता के सामने अपना सकारात्मक एजेंडा रख ही नहीं पाता। वहीं, सत्तारूढ़ भाजपा की समस्या है कि प्रधानमंत्री मोदी की स्वीकार्यता के पीछे पार्टी के अधिकतर सांसद और विधायक छुपे हुए हैं, जनता से कटे हुए हैं, भ्रष्टाचार में लिप्त हैं और स्थानीय विकास के लिए उनके पास कोई रोडमैप नहीं। कब तक जनता मोदी के नाम पर उन्हें चुनेगी?

प्रधानमंत्री वैश्विक और राष्ट्रीय स्तर पर कील-कांटे दुरुस्त करने में जुटे हैं, लेकिन स्थानीय स्तर पर तो विधायकों, सांसदों एवं संगठन पदाधिकारियों की जिम्मेदारी है कि वे प्रशासन से संवाद कर समस्याओं का समाधान कराएं और विकास गतिविधियों को आगे बढ़ाएं। कुछ लोग इस स्थिति का लाभ उठाकर 'देश में अब लोकतंत्र संसद से नहीं, सड़क से तय होगा, चुनाव से नहीं, प्रतिरोध से तय होगा' जैसी बातें करने लगते हैं, लेकिन वे भूल जाते हैं कि सड़क और प्रतिरोध से निकला जनादेश अंततः जाएगा तो संसद की ओर ही। फिर भी इस आवश्यकता को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि आज लोकतंत्र पुनर्विन्यास मांगता है, क्योंकि जनता को सत्ता-परिवर्तन से अधिक व्यवस्था-परिवर्तन की दरकार है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 11-08-26

कारोबार व शासन का नया सेतु होगा उद्यम डीपीआई

मनीष सभरवाल और काम्या चंद्रा, (सभरवाल टीमलीज सर्विसेज के सह संस्थापक हैं और चंद्रा आईआईआईटी बेंगलूरु में सेंटर फॉर डीपीआई की सह संस्थापक हैं)

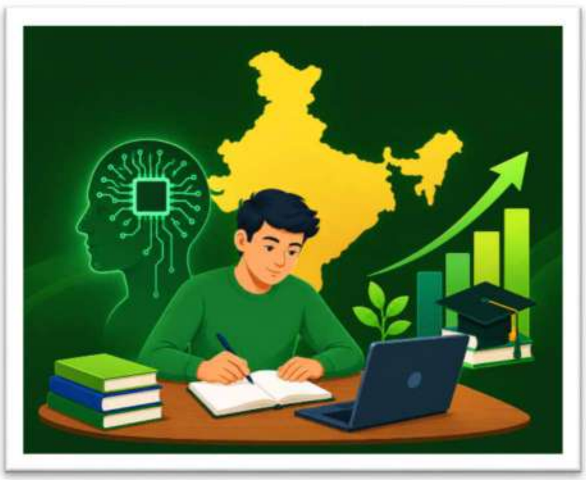

रणनीति वह होती है, जिसमें असीमित आकांक्षाओं और सीमित संसाधनों के बीच संतुलन बिठाया जाता है। जैसे-जैसे आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) के प्रति उत्साह थम रहा है और लार्ज लैंग्वेज मॉडल (एलएलएम) की वास्तविक क्षमता तथा डेटा सेंटरों में निवेश से मिलने वाले लाभ का नए सिरे से आकलन किया जा रहा है वैसे-वैसे भारत को एआई में फिर मजबूत उपस्थिति दर्ज कराने का अच्छा मौका मिल रहा है। किंतु भारत को ऐसी रणनीति अपनानी होगी, जिसमें उसकी खास डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना (डीपीआई) का पूरा लाभ मिले।

इस रणनीति के तहत उद्यमों के लिए भी मजबूत डीपीआई तैयार करना होगा, जिसमें हरेक उद्यम को विशिष्ट और सत्यापित डिजिटल पहचान देनी होगी, संस्थाओं को डिजिलॉकर देने होंगे, सरकारी सेवाओं को पीडीएफ के बजाय ऐप्लिकेशन प्रोग्रामिंग (एपीआई) के जरिये उपलब्ध कराना होगा और सभी कानूनों के लिए एक ही प्रामाणिक डिजिटल स्रोत (इंडिया कोड) बनाना होगा। इससे औपचारिक उद्यमों की संख्या बढ़ेगी और सरकार तथ्यों के आधार पर बेहतर नीतियां बना पाएगी।

भारत में व्यापक समृद्धि लाने के लिए सरकार और उद्यमों के बीच मौजूद वर्तमान संबंधों में बदलाव लाना आवश्यक है। आज भी देश का लगभग 45 प्रतिशत श्रमबल कृषि क्षेत्र में कार्यरत है क्योंकि देश में नियोक्ता तो 7 करोड़ से अधिक हैं मगर 10 करोड़ रुपये से अधिक चुकता पूंजी वाली कंपनियां मुश्किल से 30,000 हैं। अभी केवल 11 प्रतिशत कामगार विनिर्माण क्षेत्र में लगे हैं, कंपनियां अनुसंधान पर सकल घरेलू उत्पाद का केवल 1 प्रतिशत खर्च करती हैं और महज 20 प्रतिशत कामगारों को औपचारिक रोजगार मिला है। इन्हें बढ़ाना है तो अधिक उत्पादकता वाले उद्यमों की संख्या बढ़ानी होगी। इसके लिए नियामकीय पेचीदगी तो कम करनी ही होगी, सरकार तथा उद्यमों के बीच संपर्क कामकाज और संबंधों को डिजिटल भी बनाना होगा।

उद्यमों का डीपीआई बेहतर नीति बनाने के लिए आंकड़े और प्रमाण देगा। अमेरिकन इकनॉमिक रिव्यू में 2020 में प्रकाशित शोध पत्र 'रूरल रोड्स ऐड लोकल इकनॉमिक डेवलपमेंट' में स्थानीय आर्थिक गतिविधियों का अनुमान

लगाने के लिए रात के समय उपग्रह से दिखने वाली रोशनी का इस्तेमाल किया गया। अध्ययन में निष्कर्ष निकाला गया कि भारत की लगभग 40 अरब डॉलर (करीब 3.2 लाख करोड़ रुपये) के ग्रामीण सड़क कार्यक्रम से गांवों की आय या उपभोग में कोई स्पष्ट बढ़त नहीं दिखाई दी।

किंतु हाल ही में एआई और डीपीआई पर नैशनल काउंसिल ऑफ एप्लाइड इकनॉमिक रिसर्च की एक संगोष्ठी में मिनेसोटा विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रवि बापना ने एक नया बकिंग पेपर 'पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर फॉर मेजरिंग वेलफेयर' पेश किया। बापना इसके सह-लेखक हैं। पिछले शोध पत्र के निष्कर्ष पर सवाल उठाते हुए इस अध्ययन में कहा गया है कि लोगों के उपभोग और आर्थिक गतिविधियों पर किसी आधारभूत संरचना परियोजना का प्रभाव उपग्रह के रात के आंकड़ों के बजाय भुगतान के आंकड़ों बेहतर पता लग सकता है। शोध में देश की प्रमुख वित्तीय प्रौद्योगिकी कंपनी फोनपे के आंकड़े देखे गए, जिसके साथ 70 करोड़ से अधिक उपयोगकर्ता और 5 करोड़ से अधिक व्यापारी जुड़े हैं। इसके अनुसार भुगतान से मिलने वाले 52 प्रतिशत सूचना संकेत किसी जिले के भीतर आर्थिक गतिविधियों में बदलाव को दर्शाते हैं, जबकि उपग्रह से रात में दिखने वाली रोशनी के केवल 3 प्रतिशत आंकड़े यह दिखाते हैं।

दूसरे शब्दों में कहें तो लगातार तैयार हो आंकड़ों का महत्त्व अधिक है। कल्पना कीजिए कि 15 रुपये प्रति गीगाबाइट की दर से (वैश्विक औसत का लगभग दसवां हिस्सा) उद्यम डीपीआई का इस्तेमाल कर रहे 1 अरब सक्रिय इंटरनेट उपयोगकर्ताओं (जो छह वर्ष पहले 62.2 करोड़ थे) द्वारा तैयार डिजिटल आंकड़ों का प्रयोग शोध और नीतिगत विश्लेषण के लिए किया जाए तो नीति निर्माण कितना सटीक, कारगर और प्रमाण आधारित हो सकता है।

उद्यमों के लिए डीपीआई कोई असामान्य कल्पना नहीं बल्कि आधुनिक तकनीक का व्यावहारिक और स्वाभाविक उपयोग है। इससे अलग- अलग मौजूद नियामक प्रणालियों की जगह ऐसी समन्वित डिजिटल व्यवस्था आ सकती है, जिसमें पहचान, लाइसेंस, प्रमाण-पत्र, भुगतान और अनुपालन जैसी सभी प्रक्रियाएं विभिन्न प्लेटफॉर्मों के बीच आसानी से संचालित होंगी। आज छोटे से व्यापारी या अपने रोजगार वाले का एक चौथाई समय सरकारी पोर्टलों और कागजी प्रक्रियाओं में ही खप जाता है। उद्यम डीपीआई आएगा अनुपालन प्रक्रिया स्वतः संचालित एजेंट से चलने वाली, परस्पर जुड़ी हुई हो सकती है तथा बिजनेस सॉफ्टवेयर से जुड़ सकती है। उद्यम डीपीआई के स्तंभ पहचान, सुरक्षित डेटा साझेदारी और भुगतान इसके साथ ही कारोबारों के लिए ऋण की उपलब्धता बढ़ाएंगे, औपचारिक अर्थव्यवस्था से जुड़ने को प्रोत्साहित करेंगे और ग्राहकों तथा कर्मचारियों का विश्वास भी बढ़ाएंगे। आइए, इसके प्रत्येक प्रमुख स्तंभ को समझते हैं।

विशिष्ट एवं सत्यापन योग्य उद्यम पहचान: अर्थशास्त्री रोनाल्ड कोस की दलील - कंपनियां लेनदेन की लागत कम करने के लिए होती हैं सरकारी पेचों में गुम हो गई है। आज एक सामान्य उद्यम कम से कम 25 पहचान क्रमांकों में उलझा रहता है, जिनमें करीब 16 केंद्र सरकार और 9 राज्य सरकारों से मिलते हैं। प्रत्येक पहचान क्रमांक का मकसद अलग है मगर इन सबका एक साथ इस्तेमाल किसी पहेली को हल करने जैसा होता है। यदि

पैन 2.0 के आधार पर प्रत्येक उद्यम को एक ही विशिष्ट पहचान क्रमांक दिया जाए तो अलग-अलग क्रमांकों की जरूरत काफी हद तक खत्म हो सकती है। यह मशीन द्वारा पढ़ने योग्य डिजिटल पहचान होगी, जिसका उपयोग विभिन्न सेवाओं के लिए ई-केवाईसी के रूप में किया जा सकेगा। इससे एआई आधारित प्रणाली भी सुरक्षित और भरोसेमंद तरीके से लेन-देन कर सकेंगी तथा संस्थाओं के बीच भुगतान यूपीआई की तरह सरल हो जाएगा।

एंटिटी डिजिलॉकर: अभी किसी भी उद्यम से जुड़े दस्तावेज अलग-अलग सरकारी पोर्टल, ई-मेल, विभागों और कार्यालयों में रहते हैं। इन्हें एक ही स्थान से लेने या साझा करने की कोई व्यवस्था नहीं है, जिस कारण प्रक्रिया बेतरतीब दिखती है। केंद्र सरकार के विभिन्न विभाग लगभग 489 प्रकार के उद्यम दस्तावेज जारी करते हैं और राज्य सरकारें 3,000 से भी ज्यादा । ऐसे में एंटिटी डिजिलॉकर उद्यम दस्तावेजों का स्वाभाविक मंच बन सकता है, जहां संबंधित विभागों से लाइसेंस, पंजीकरण और स्वीकृतियों जैसे दस्तावेज सुरक्षित तरीके से तत्काल साझा किए जा सकें। इससे व्यवसाय एक ही दस्तावेज को अलग-अलग पोर्टल पर बार-बार अपलोड करने के बजाय केवल एक बार अनुमति देकर यह काम कर पाएंगे।

इस प्रकार विश्वसनीय एंटरप्राइज डेटा की मदद से सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों को उसी तरह सस्ता कर्ज मिल सकता है, जिस तरह अकाउंट एग्रीगेटर व्यवस्था से खुदरा ऋण आसान हो गया। अभी एंटिटी डिजिलॉकर पर केवल उद्यम, जीएसटीआईएन और पैन ही उपलब्ध हैं तथा कंपनी मामलों के मंत्रालय के दस्तावेज एवं राज्यों द्वारा जारी लाइसेंस और प्रमाणपत्र अब भी इस पर नहीं हैं।

पीडीएफ से एपीआई तकः आज भी देश की 2,500 से अधिक सरकारी वेबसाइट को इंसान ही इस्तमाल कर सकते हैं। हरेक का अलग इंटरफेस, आवेदन प्रक्रिया और नियम हैं किंतु ओपन एपीआई नहीं हैं, जिससे लोगों को अलग-अलग पोर्टल पर जाना पड़ता है। अब लोगों को नहीं बल्कि सॉफ्टवेयर और एआई आधारित एजेंटों को सरकारी प्रणालियों से संवाद करना चाहिए। यदि हर सरकारी सेवा, आवेदन, भुगतान और अनुपालन के लिए एपीआई सेतु के माध्यम से ओपन एपीआई उपलब्ध कराए जाएं तो सरकारी सेवाएं सीधे व्यापारिक प्रणालियों का हिस्सा बन पाएंगी। भारत में लगभग 8,700 सरकारी एपीआई मौजूद हैं मगर अब हर अनुपालन प्रक्रिया के लिए एपीआई होना चाहिए, जो उद्यमों का डीपीआई इस्तेमाल करे। अन्यथा पासवर्ड साझा करने और कैप्चा टाइप करने से हम फिर पुराने जमाने में पहुंच जाएंगे।

इंडिया कोड: भारत में सभी कानूनों की अद्यतन और प्रामाणिक जानकारी मुहैया कराने वाला इकलौता मंच नहीं है। इन्हें समझने के लिए अलग-अलग अधिनियमों, नियमों, 25 से अधिक प्रकार की अधिसूचनाओं और केंद्र तथा राज्य सरकारों के विभिन्न विभाग खंगालने पड़ते हैं। इसलिए कानून समझना भी उतना ही कठिन है, जितना उसका पालन करना । इसके लिए भारत के राजपत्र, ई- राजपत्र और इंडिया कोड को मिलाकर ऐसा इकलौता आधिकारिक मंच बनाया जाए, जहां सभी नियम- कानूनों को मशीन पढ़ सके। इससे एआई एजेंट कानून खुद ढूंढेंगे, अर्थ समझेंगे और उसी हिसाब से काम करेंगे।

उद्यमों के लिए डीपीआई से सरकार की 'जन विश्वास' की भावना और मजबूत हो सकती है। नियम कायदे घटाए और प्रशासनिक सेवा सुधारे बगैर उद्यमों के लिए कागज, कार्यालय में हाजिरी और नकदी के बगैर बनाई गई व्यवस्था की आलोचना यह कहकर की गई है कि इसने राजमार्ग के बजाय पगडंडी बना दी है यानी पुरानी व्यवस्था ही रखी है। यह बात अलग है कि आलोचना करने वालों ने कभी किसी को रोजगार नहीं दिया।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 11-08-26

अपने सेवा आयोगों को सुधारें राज्य

विभूति नारायण राय, (पूर्व कुलपति व साहित्यकार)

रांची में झारखंड लोक सेवा आयोग (जेपीएससी) और झारखंड कर्मचारी चयन आयोग (जेएसएससी) की भर्ती परीक्षाओं में धांधली के खिलाफ छात्रों का आंदोलन जारी है। हालांकि, झारखंड लोक सेवा आयोग भंग हो चुका है और इसके पूर्व अध्यक्ष गिरफ्तार भी किए जा चुके हैं, मगर छात्र कई अन्य परीक्षाओं को रद्द कराने को लेकर अड़े हुए हैं। यह महज संयोग नहीं था कि जिस दिन नई दिल्ली के जंतर मंतर पर चल रहा कॉकरोच जनता पार्टी के नेताओं का अनशन खत्म हुआ, उसी दिन वहां से 1,200 किलोमीटर दूर रांची में समान प्रकृति और मांगों वाला एक अन्य आंदोलन शुरू हो गया। दोनों के पीछे एक ही आक्रोश था।

नौजवान इस तथ्य से बहुत विचलित हैं कि सरकारी नौकरियों या शिक्षा संस्थानों में दाखिले के लिए होने वाली प्रतियोगिता परीक्षाओं के पर्चों की गोपनीयता में बार-बार सेंध लग रही है। हर दूसरी-तीसरी परीक्षा की शुचिता पर शक किया जा रहा है। बार-बार परीक्षाएं रद्द हो रही हैं या परिणाम घोषित होने के बाद अदालती विवादों में फंसकर सालों-साल अधर में लटके रह जा रहे हैं। नेशनल टेस्टिंग एजेंसी (नीट) या झारखंड राज्य लोक सेवा आयोग की प्रतियोगिता परीक्षाओं में धांधली की शिकायतों पर छात्र तभी उत्तेजित हुए, जब पानी सिर के ऊपर बहने लगा। पिछले कई वर्षों से धांधली की शिकायतें आ रही थीं और सक्षम प्राधिकारी बजाय कार्रवाई करने के लीपा-पोती करते जा रहे थे।

दिल्ली या रांची के आंदोलनों को अपवाद के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। पहले भी कई लोक सेवा आयोगों के अध्यक्षों और सदस्यों के विरुद्ध गिरफ्तारी समेत अन्य दंडात्मक कार्रवाइयां हुई हैं। संघ लोक सेवा आयोग में कुछ वर्षों पूर्व महाराष्ट्र कैडर की एक महिला आईएएस अधिकारी ने नियमों के साथ इतनी आसानी से छेड़छाड़ की थी कि सुनने वाले दंग रह गए थे। ऐसा आयोग के कुछ अधिकारियों की मिलीभगत से ही संभव हो सकता था। परीक्षा लेने वाली संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार और उनके प्रति अभ्यर्थियों मे गुस्सा किसी शून्य से नहीं

उपजा है। अपनी वर्षों की मेहनत को जब एक नौजवान तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के चलते व्यर्थ जाते देखता है, तो उसकी प्रतिक्रिया उसी तरह की हो सकती है, जैसी दिल्ली और रांची में दिखी या दिख रही है।

भारत के पहले गृह मंत्री सरदार पटेल ने नौकरशाही को भारतीय एकता के लिए जरूरी 'स्टीलफ्रेम' बताया था। संविधान ने सेवाओं के लिए जरूरी प्रावधान बनाए और उनमें चयन के लिए संघ लोक सेवा आयोग और प्रांतीय लोक सेवा आयोगों के गठन की व्यवस्था की। आजादी के बाद शुरुआती दशकों में तो सब कुछ ठीक- ठाक चला, पर नब्बे का दशक आते-आते उनके खिलाफ तरह-तरह की शिकायतें आने लगीं। |मुख्य कारण बना आयोगों में योग्यता या सत्यनिष्ठा की उपेक्षा कर राजनीतिक कारणों से होने वाली सदस्यों और अध्यक्षों की नियुक्तियां । इनमें जातियों या व्यक्तिगत वफादारियों को ध्यान में रखकर संदिग्ध व्यक्तियों को नियुक्त किया गया और उन्होंने वह सब किया, जिसकी कल्पना भी संविधान निर्माताओं ने नहीं की थी। उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग में तो एक अध्यक्ष ऐसे भी आए, जो स्कूल बोर्ड की परीक्षाओं में ठेके पर नकल कराने के लिए बदनाम थे बड़ी मुश्किल से उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप से उन्हें निकाला जा सका। हालात इतने बिगड़ गए थे कि किसी परीक्षा का परिणाम घोषित करने के पहले अनुमोदन के लिए मुख्यमंत्री कार्यालय भेजा जाता था ।

किसी भी कीमत पर एक सरकारी नौकरी हासिल करने की मारामारी के पीछे दो महत्वपूर्ण कारण हैं। पहला तो हमारे विकास का आधुनिक मॉडल है। रोजगार- विहीन विकास का यह मॉडल हमें दुनिया मे चौथी या पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था तो बना रहा है, पर एक बड़ी आबादी को समुचित और सुरक्षित रोजगार से वंचित कर साधन संपन्न और वंचितों के बीच एक ऐसी खाई भी पैदा कर रहा है, जो समाज को कभी शांति से नहीं बैठने देगा। अवसरों की कमी का हाल यह है कि उत्तर प्रदेश में हाल में पुलिस कांस्टेबल की 32,679 रिक्तियों के सापेक्ष 21,92,236 अभ्यर्थी लिखित परीक्षा में बैठे थे। एक पद के लिए लगभग 65 उम्मीदवार थे। यह स्थिति अब लगभग हरेक परीक्षा में दिखती है। हमारी जीडीपी बढ़ रही है, पर रोजगार नहीं । हम सबसे तेज बढ़ने वाली बड़ी अर्थव्यस्था तो बन गए हैं, पर इसमें रोजगार के अवसर निरंतर सिकुड़ रहे हैं।

इस स्थिति के लिए दूसरा बड़ा कारण भी इसी मॉडल से जुड़ा है। उदारीकरण के दौर में निजी नौकरियों के ऊपर सरकारी पर्यवेक्षण कम से कमतर होता गया है, फलस्वरूप काम के घंटों, वेतन या सेवा शर्तों के मामलों में निजी क्षेत्र मनमानी करने लगा है। कॉरपोरेट दुनिया एक छोटे समूह को पैकेज की भूल-भुलैया में उलझाकर शेष कामगारों को सिर्फ जीवित रह सकने लायक पारिश्रमिक देने में विश्वास करती है। सरकारी सेवाओं, खास तौर से मंझोली और निचले दर्जे की नौकरियों में वेतन, अन्य भुगतान और सुरक्षा निजी क्षेत्रों के मुकाबले बहुत अधिक है, इसलिए भी अब लगभग मान लिया गया है कि रोजगार का मतलब कोई सरकारी नौकरी है। फलस्वरूप, जैसे ही रिक्ति का कोई विज्ञापन छपता है, भीड़ उस पर टूट पड़ती है।

जंतर मंतर या रांची में नौजवान आंदोलनों के रास्ते पर तभी आगे बढ़े, जब उन्हें लगा कि सरकारें उनकी बातें नहीं सुन रही हैं और समाज उनके प्रति असंवेदनशील हो गया है। उन्हें देशद्रोही कहना या किसी दुश्मन देश के एजेंडे पर काम करने वाला मानने से हम न सिर्फ उनके साथ ज्यादती कर रहे हैं, वरन भारतीय लोकतंत्र को भी

कमजोर कर रहे हैं। उनके आंदोलन का ही प्रभाव है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रमुख को मुंबई में कहना पड़ा, 'प्रदर्शन लोकतंत्र का हिस्सा है। यदि युवा आवाज उठाएं, तो उन्हें देशद्रोही न कहो'।

जिस जेन जी ने देश में विमर्श की भाषा बदल दी, वह हमसे कम देशप्रेमी नहीं है। उन्हें सिर्फ शांति व्यवस्था का मसला मानकर निपटाने की कोशिश आत्मघाती होगी। उनके मन में जायज गुस्सा भरा हुआ है। सरकारों को उनके साथ बैठकर उनकी तकलीफ समझने की कोशिश करनी चाहिए। इसी संवाद से यह समझ भी पैदा होगी कि रोजगार-विहीन विकास के मॉडल से हम अपनी जीडीपी का ग्राफ तो ऊपर ले जा सकते हैं, पर 2047 तक विकसित भारत बनने का हमारा सपना एक मृग मरीचिका ही बनकर रह जाएगा।

Date: 11-08-26

प्रशासनिक जवाबदेही तय करने लगे डिजिटल मंच

प्रेम प्रकाश, (वरिष्ठ पत्रकार)

लोकतंत्र में चुनाव किसी पार्टी को सत्ता तक पहुंचा सकते हैं, पर जनता का विश्वास एक सरकार में इस बात से बनता है कि उसकी बात कितनी जल्दी सुनी गई और उसकी समस्या का समाधान कितनी ईमानदारी से किया गया? इसलिए आज के दौर में सुशासन का अर्थ केवल योजनाएं बनाना या सेवाएं उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि यह है कि सरकार नागरिकों के प्रति कितनी जवाबदेह, पारदर्शी और संवेदनशील है।

अच्छी बात यह है पिछले तीन दशकों के प्रशासनिक सुधारों ने देश में इस सोच को धीरे-धीरे संस्थागत बना दिया है। डिजिटल क्रांति ने इस प्रक्रिया को नई गति दी । जो शिकायतें फाइलों में दब जाती थीं, वे अब ऑनलाइन दर्ज होती हैं, उनकी डिजिटल ट्रैकिंग होती है और संबंधित अधिकारी की जवाबदेही भी तय होती है। यही परिवर्तन सुशासन के उस नए दौर का संकेत है, जिसे 'सुशासन 2.0' कहा जा सकता है। केंद्र सरकार की ' केंद्रीकृतलोक शिकायत निवारण एवं निगरानी प्रणाली' इस बदलाव का सबसे बड़ा उदाहरण है। हर वर्ष लाखों नागरिक इसके माध्यम से अपनी शिकायतें दर्ज करा रहे हैं। प्रशासनिक सुधार एवं लोक शिकायत विभाग लगातार इसके भाग लगातार इसक दायरे और दक्षता का विस्तार कर रहा है। वर्ष 2026 में शुरू किया गया एआई आधारित वॉयस चैटबॉट- 'समाधान दीदी' इस दिशा में एक बड़ा कदम है। अब नागरिक भारतीय भाषाओं में बोलकर भी शिकायत दर्ज करा सकते हैं और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) उसे स्वतः संबंधित विभाग तक पहुंचा देती है। साफ है, शिकायत निवारण व्यवस्था अब डाटा संचालित, बहुभाषी और बुद्धिमान प्रशासनिक प्रणाली में विकसित हो रही है।

वैसे, भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में एक ही मॉडल सभी राज्यों पर लागू नहीं हो सकता। इस लिहाज से देखें, तो उत्तर प्रदेश ने डिजिटल मॉनिटरिंग व विभागीय रैंकिंग के माध्यम से जवाबदेही बढ़ाने का प्रयास किया

है, जबकि मध्य प्रदेश ने शिकायतकर्ता की संतुष्टि को प्रक्रिया का अनिवार्य हिस्सा बनाया। केरल ने सेवा वितरण और शिकायत निवारण का प्रभावी एकीकरण किया, वहीं राजस्थान एवं आंध्र प्रदेश ने स्थानीय प्रशासन की सक्रिय भागीदारी पर जोर दिया। इन विविध प्रयोगों ने एक बात तो स्पष्ट कर दी कि तकनीक तभी सफल होती , जब वह प्रशासनिक संस्कृति का हिस्सा बन जाए।

इन अनुभवों के बीच बिहार का 'सहयोग' मॉडल डिजिटल शिकायत निवारण के मामले में उल्लेखनीय पहल बनकर उभरा है। लोक सेवा अधिकार अधिनियम, जनता दरबार और ऑनलाइन सेवा वितरण जैसे पूर्ववर्ती सुधारों को यह एकीकृत डिजिटल प्लेटफॉर्म से जोड़ता है । शिकायत दर्ज होते ही उसकी ट्रैकिंग शुरू हो जाती है, संबंधित अधिकारी की जवाबदेही तय होती है और समय-सीमा पार होते ही मामला स्वतः उच्च स्तर तक पहुंच जाता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता सहयोग शिविर हैं, जिसके तहत प्रशासन नागरिकों तक पहुंचकर शिकायतें दर्ज करता है और उनका समाधान सुनिश्चित करता है। सरका समीक्षाओं के अनुसार, इन शिविरों में 90 फीसदी मामलों का निस्तारण हो चुका है, जबकि शेष मामलों के लिए 30 दिनों की समय सीमा निर्धारित है।

हजारों शिकायतों के विश्लेषण से सरकारों की यह समझ बेहतर हुई है कि किन विभागों में ढांचागत कमियां हैं, किन सेवाओं में सुधार की जरूरत है और किन क्षेत्रों में नीतिगत हस्तक्षेप अपेक्षित है। इस अर्थ में शिकायत निवारण अब केवल सेवा वितरण का माध्यम नहीं, बल्कि साक्ष्य आधारित शासन और नीति-निर्माण का अहम आधार बनता जा रहा है। डिजिटल शिकायत निवारण का सबसे बड़ा परिवर्तन यह है कि शिकायतें अब केवल व्यक्तिगत समस्याएं नहीं रह गई हैं, बल्कि प्रशासन के लिए मूल्यवान सार्वजनिक डाटा का स्रोत बन रही हैं। आने वाले वर्षों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डाटा एनालिटिक्स और पूर्वानुमान आधारित प्रशासन इस व्यवस्था को अधिक सक्षम और दूरदर्शी बना सकते हैं।

यह बात भी समझने की है कि तकनीक अपने आपमें सुशासन की गारंटी नहीं है। डिजिटल शिकायत प्रणाली की सफलता का वास्तविक पैमाना शिकायतों की संख्या नहीं, बल्कि समाधान की गुणवत्ता, नागरिक की संतुष्टि और प्रशासनिक जवाबदेही है।